JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जनजाति महिलाओं की पंचायत में भागीदारी – एक अध्ययन

शोधार्थी
वन्दना राजपूत
हमीदिया कला एवं वाणिज्य शासकीय महाविद्यालय, भोपाल

स्वतन्त्र भारत के आरम्भिक वर्षों से लेकर वर्तमान समय तक जनजातियों के मध्य मानवशास्त्रीय अध्ययनों पर बल दिया। जिसमें सर्वदा अध्ययनों की इस प्रक्रिया के अन्तर्गत नये आयामों को गढ़ा जाने लगा। जो प्रक्रिया अभी भी जारी है। भारतीय वैदिक इतिहास में सृष्टि की मेरूदण्ड के रूप में माना है। जो किसी भी राष्ट्र की संस्कृतिक एवं राजनैतिक संस्कृति का परिचायक है। ज्ञातव्य विभिन्न संस्कृतियों का निर्माण में नारीयों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, इससे हम झुटला नहीं सकते, किन्तु यह भी कटू सत्य है कि नारी की स्थिति में निरन्तर बदलाव आये। नारी की यही अस्थिरता ने प्रत्येक युग में समाज व्यवस्थाकारों पर प्रश्न चिन्ह् खड़ा किया है। जो चिन्तन का प्रमुख विषय रही है।

भारतीय स्वतन्त्रता के 71 वर्ष एवं भारतीय संविधान के क्रियाशीलता के 69 वर्ष पूर्ण होने के पश्चात् भी भारतीय नारीयों की जिनमें अनुसूचित जनजाति महिलाएं भी सम्मिलित है। जिनमें शैक्षाणिक, आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक स्थिति में कोई ज्यादा सुधार नहीं आया है। जहाँ तक बात अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की करे तो पाते हैं कि उनमें प्राकृतिक वस्तुओं का अनुशरण कर उन्हें अपनी जीविका उपर्जन तक सीमित रखा है।

पिछले कुछ समय से भारतीय राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ा है जिससे किस हद तक बढ़ा है यह एक विचारणीय प्रश्न है? जो कुछ प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है उसमें महिलाओं की क्या भूमिका रही है? वे अपनी इस सहभागिता को किस रूप में देखते है? यह राजनीतिक सहभागिता नाम मात्र की है या कार्यात्मक रूप में प्रगट है? राजनीतिक निर्णय में उनकी कितनी सहमति या असहमति है? लोकसभा एवं विधानसभा के आम चुनावों में सीटों को लेकर उनकी क्या समझ है? राजनीति में आरक्षण के वाबजूद गोंड, परधान तथा कोरकू जनजाति की महिलाओं को राजनैतिक दल व पार्टी के सदस्य इन्हें उम्मीदवार क्यों नहीं बनाया जाता है? उम्मीदवार के रूप में राष्ट्रीय पार्टी एवं क्षेत्रीय पार्टीयां इन्हें उम्मीदवार के रूप में क्यों नहीं उतारती? तथा ये जनजाति स्वयं प्रयास करते हैं, या नहीं आदि प्रश्नों को इस अनुसंधान द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

प्रमुख शब्द – जनजाति, भागीदारी, कानून, पंचायती राज, राजनीति।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अनुसार, जनजाति से तात्पर्य उन जनजाति समुदाय अथवा समुदायों के अंशों या समूहों से हैं जो संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजातियों के रूप में माने गये हैं। इसी अनुच्छेद के तहत राष्ट्रपति के द्वारा आम सूचना जारी की जाती है। संसद किसी भी जनजातिय समुदाय अथवा उसके अंशों को अनुसूचित जनजातियों की सूची से निकल सकती है या उसमें जोड़ सकती है।[1]

पंचायत में जनजाति महिलाओं की भागीदारी

सृष्टि की कल्पना महिला के बिना पूर्ण नहीं मानी गई है। महिला इस सृष्टि के अभूतपूर्व एवं बहुमूल्य संसाधन व धरोहर में से एक है। महिला के योगदान के रूप में मनु के साथ श्रृद्धा के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। महिला के बिना गृह–गृहस्थी, परिवार, देश व समाज के निर्माण के साथ संचालन की कल्पना नहीं की जा सकती। जब से सृष्टि की रचना हुयी है समाज निर्माण में महिलाओं का सकारात्मक योगदान रहा है तो फिर राष्ट्र निर्माण हेतु उनका राजनीतिक योगदान क्यों आवश्यक नहीं। भारतीय राजनीति में इनका पक्ष कैसे अछूता रह सकता है।

प्राचीनकाल में महिलाओं तथा अन्य कमजोर वर्गों की यथोचित स्थिति के सुधार हेतु देश में प्रजातंत्र के पूर्ण विकास के लिए महिलाओं को कुछ अधिकार दिये गये। जो स्वतन्त्रता के पश्चात् भी कांग्रेस सरकार ने महिलाओं की स्थिति व समाज एवं राज्य के विभिन्न स्तरों में सुधार हेतु प्रतिनिधित्व के रूप में महिलाओं की सहभागिता का पक्ष रखा। आज विश्व स्तर पर भारतीय महिलाओं ने कई कीर्तिमान स्थापित किया है। यही सुधार जनजाति महिलाओं में भी देखने हेतु 73 वें संविधान संशोधन के रूप में पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को प्रतिनिधित्व के लिए अवसर दिया।

अनुसूचित जनजाति महिलाओं के विकास व उत्थान के लिए भारतीय संविधान में अनेक संवैधानिक उपबन्ध है एवं सुरक्षात्मक प्रावधान का उल्लेख किया गया है। इसके साथ ही उनके सामाजिक, शैक्षाणिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास हेतु विशेष प्रावधान का निर्माण किया है। अनुच्छेद 15(3) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार राज्य सरकार को विशेष अधिकार प्रदान करती है जिसमें राज्य सरकार महिलाओं के लिए विशेष कानून व प्रावधान बना सके।

स्वतन्त्रता के 7 दशक बीत जाने के बाद भी आज जो कानून व प्रावधान महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित रखते हैं वे असफल से दिखाई पड़ते हैं। जिसमें कई उदाहरण महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराध व अत्याचार के रूप में समाज के समक्ष एक चुनौती के रूप में हैं। वही जनजाति महिलाओं की स्थिति वही की वही रूकी हुयी है। वर्तमान समय महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक स्थिति को देखकर यहर अंदाजा लगाया जा सकता है कि महिलाओं की सुरक्षा को लेकर जो प्रावधान व कानून बने हैं वह सैद्धांतिक संदर्भ में उन्हें अधिकार एवं अवसर प्रदान करते हैं। उनमें कोई कमी नहीं दिखाई देती है। किन्तु व्यवहारिक स्वीकार्यता के संदर्भ में यह लक्ष्य अपूर्ण ही जान पड़ता है।

भारतीय संविधान में लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिये लिंगभेद रहित समानता एवं स्वतन्त्रता की व्यवस्था की गई है। इसे व्यवहारिक रूप प्रदान करने हेतु 73 वें एवं 74 वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को नवीन रूप देने हेतु विस्तृत एवं वास्तविक स्वरूप प्रदान किया। इस प्रावधान के अन्तर्गत दलितों एवं महिलाओं को सहभागिता निभाने हेतु आरक्षण की व्यवस्था प्रदान कर स्थानीय निकायों या संस्थाओं में अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त कर सके। इसके साथ ही इसका उद्देश्य स्थानीय निकायों को सुगठित, सुदृढ़ एवं अधिकार युक्त बनाना था। ताकि लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना की जा सके। महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के लिए संसद एवं राज्य विधान मण्डलों में भी आरक्षण की व्यवस्था की गई, जिससे महिलाओं की दशा व स्थिति को सुधारा जा सके। वर्तमान में भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक न्याय की स्थापना एवं लोकतन्त्र को मजबूत बनाने के लिए यह अति अवश्यक कदम है। सामाजिक न्याय तो तब मिलेगा जब षिक्षा के जरिए देष के सभी बच्चों को बराबरी के अवसर प्राप्त होंगे।[2]

''अनुसूचित जनजाति महिलाओं की पंचायत में भागीदारी'' भागीदारी किस प्रकार की हो, इस भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए हमें राजनीतिक सहभागिता या राजनीतिक भागीदारी के अर्थ को समझना होगा। राजनीति भागीदारी दो शब्द **'राजनीति'** व **'भागीदारी'** से मिलकर बना है। भागीदारी या सहभागिता का अर्थ है किसी कार्य या गतिविध में भाग लेना, अपनी उपस्थिति दर्ज करना या व्यवहार में किसी कार्य का हिस्सा बनना। भागीदारी की परिधि में

किसी विशिष्ट संदर्भ में लोगों की चेतना दृष्टिकोण विभिन्न प्रक्रियाओं में भागीदारी उद्देश्यपूर्ण व्यवहार एवं सम्बन्धित संदर्भों को प्रभावित करने या पुनः निर्धारित करने की जागरूकता व सार्मथ्य आदि तत्व समाविष्ट है। सहभागिता या भागीदारी कई रूपों में हो सकती है कार्य सहभागिता, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में भागीदारी प्रस्तुत अध्ययन का सन्दर्भ राजनीतिक भागीदारी से हैं। इसके अन्तर्गत वोट देने, पंच, उम्मीदवार, सरपंच तथा ग्राम सभा या मीटिंग में उपस्थिति के रूप में देखा जा सकता है।

राजनीति का सरोकार मनुष्य के सार्वजनिक जीवन से होता है। यह किसी भी समाज की आवश्यकता है। इसके अन्तर्गत दो या अधिक पक्षों के मध्य संघर्ष, मतभेद एवं समाधान के लिए शासन या सरकार का होना आवश्यक होता है। राजनीति विचाराधारों को लेकर की जाती है, जिसमें विभिन्न दलों व पार्टी की अपनी–अपनी विचारधारा होती है। वे दल व पार्टीया अपने इसी दायित्वों का निर्वहन करते हुये राष्ट्र के विकास तथा राष्ट्र निर्माण को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं। इस प्रकार संकुचित अर्थ में शासन व उससे संबंधित गतिविधियाँ राजनीति कहलाती है। व्यापक अर्थ में कहे तो राजनीति सार्वजनिक जीवन से जुड़ी समस्त गतिविधियों का संचालन करना होता है।

वर्तमान राजनीति के सामने, विषेषकर उस राजनीति के सामने, जो सिर्फ सत्ता का खेल होने के बजाय अपना लक्ष्य कुछ उदात्त मूल्य बतलाती है, परिवर्तन का साधन हिंसक हो या अहिंसक यह समस्या इसी तरह की अनिर्णित गुत्थी बनी हुई है।[3] इसलिए महिलाओं की राजनीति में सहभागिता होना आवष्यक हो जाता है।

राजनीति सहभागिता या भागीदारी से आशय है व्यक्ति के राजनीति क्षेत्र में की जाने वाली गतिविधि या व्यवहार है। जिसका प्रभाव सम्पूर्ण राजनीति समाज व्यवस्था पर प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से कुछ अंश रूप में अथवा अधिक मात्रा में पड़ता है जो निरंतर सक्रियता के साथ सुचारू रूप से चलता रहता है। राजनीति भागीदारी सिर्फ अभिवृत्ति अथवा दृष्टिकोण तक सीमित न होकर यह गतिविधि का अनिवार्यतः अंग बन जाता है। राजनीतिक भागीदारी में शासन की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने का गुण होना है। विभिन्न विद्वानों द्वारा इसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया है–

नार्मन एच. पाई. और **सिडनी वर्बा** द्वारा लिखित अपने लेख **'पॉलिटिकल पार्टिसिपेशन'** में राजनीतिक सहभागिता को आम लोगों को विधिसम्मत गतिविधि माना है। जिसका उद्देश्य राजनीतिक पदाधिकारियों का चयन तथा पदाधिकारियों द्वारा लिये गये निर्णय को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना होता है। **सिडनी वर्बा, श्लूजमेन** एवं **नी** ने राजनीतिक सहभागिता को यंत्र मानकर, नागरिकों की आवश्यकताओं तथा प्राथमिकताओं को राजनीतिक निर्णय निर्माताओं तक पहुँचाने एवं उन पर प्रतिक्रिया हेतु दबाव डालना माना है।

इंटरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल सांइसेज के अनुसार राजनीतिक सहभागिता को स्वैच्छिक गतिविधियाँ माना है जिसमें सदस्य शासकों का चयन तथा जनकल्याण की नीतियों के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेना है। **न्यू हैण्ड बुक ऑफ पोलिटिकल सांइस** के अनुसार–जनकल्याण नीतियों का निर्माण, निरूपण तथा क्रियान्वयन में सक्रियता के साथ भाग लेना राजनीतिक सहभागिता है। **मैक्लास्की** के अनुसार लोकतन्त्रीय व्यवस्थाओं में शासकों का शासितों के प्रति उत्तरदायी बनाया जाना, जिसमें सहमति देना अथवा वापस लेना एक प्रमुख साधन के रूप में कार्य करना राजनीतिक सहभागिता कहलाता है।

पैरा, मोयजर एवं **डे** द्वारा राजनीतिक सहभागिता से आशय सार्वजनिक नीति के निर्माण, निरूपण तथा क्रियांवयन में सक्रियता से भाग लेना है। इसका सम्बंध नागरिकों की उन गतिविधियों से हैं जिनका उद्देश्य जनप्रतिनिधियों और अधिकारियों द्वारा लिये जाने वाले निर्णयों को प्रभावित करना। **एप्टर आमण्ड** एवं **पावेल** ने राजनीति को व्यापक संकल्पना मानकर दलों एवं समूहों की भूमिका को सम्मिलित करता है। राजनैतिक दल व संगठन का कार्य नागरिकों को राजनीतिक सहभागिता के लिए जागरूक करने तक सीमित नहीं व्यक्ति के राजनीतिकरण को भी प्रदर्शित करता है जिससे वह राजनीतिक कर्म को करने लगता है।

संविधान के अनुच्छेद 15(1) के अनुसार राज्य नागरिकों के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, जन्मस्थान या इनमें से किसी एक आधार पर कोई भी विभेद नहीं करेगा। इसी अनुच्छेद के भाग– 3 में राज्य को महिलाओं के सम्बन्ध में विशेष अधिकार प्रदान किया गया है, जिसके अनुसार महिला और बालकों के लिए राज्यों को विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं किया जा सकेगा। संविधान के भाग–4 में वर्णित नीति–निर्देशक सिद्धांत भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से राज्य को महिलाओं की स्थिति सुधारने को प्रेरित करते हैं। इनमें अनुच्छेद 38, 39(2) (3) (6), 41, 43 तथा 47 सम्मिलित किये जा सकते हैं।[4]

1974 (छठीं पंचवर्षीय योजना) के अन्तर्गत महिलाओं के विकास को ध्यान में रखते हुये वृहद् स्तर पर यह सोचा गया कि महिला पंचायत होनी चाहिए। जनता पार्टी सरकार द्वारा अशोक मेहता समिति 1978 में प्रस्तुत अपनी रिर्पोट में मजबूत निर्णय लेने की शक्तियों के साथ ही महिलाओं और अनुसूचित जातियों और जनजातियों की तरह के अन्य वंचित समूहों को सम्मिलित कर एक और अधिक मौलिक विकेन्द्रीकृत संरचना बनाने की सिफारिश की।[5]

इसी बीच महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अत्याचारों व शोषण के लिए कई कानून बने। जिसमें उनके उत्तराधिकार से सम्बन्धी कानून भी सम्मिलित थे। इसी के मद्देनजर प्रथम बार 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी केबिनेट ने 64 वाँ संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। जिसमें पंचायत में महिला अधिकारिता पर जोर दिया। साथ ही एक–तिहाई महिला आरक्षण की बात की। इस विधेयक को 'पंचायती राज विधेयक' के रूप में जाना जाता है। राजीव गांधी का मत था कि आरक्षण विधेयक जनता की शक्ति है, ये शक्ति एकत्रित होकर ही राष्ट्र निर्माण व राष्ट्रीय प्रगति कर सकेगा। वे महिलाओं को राष्ट्र की आधी आबादी मानते थे, उनका स्पष्ट मानना था कि यदि महिलाओं को प्रतिनिधित्व नहीं दिया जायेगा तो हमारे देश की आधी आबादी पर इसका सीधा असर पड़ेगा।

इस संविधान संशोधन का प्रमूख नीचे स्तर तक योजनाओं को पहुंचाना था जिससे गांव का सीधे सम्बन्ध केन्द्र सरकार के साथ हो। किन्तु राज्यों एवं विरोधी दलों के चलते 64 वें संवैधानिक संशोधन लोकसभा में तो पारित हुआ किन्तु राज्यसभा में पारित नहीं हो सका। 64 वां संवैधानिक संशोधन पारित न होने का कारण राज्यों में संदेह तथा विरोधी दलों का विरोध रहा, पंचायती राज के पुर्नजीवन की आवश्यकता तथा इसे महत्वपूर्ण बनाने की आकांक्षाये के कारण जनता के मध्य यह विधेयक खुब चर्चा का विषय रहा।

पंचायती राज व्यवस्था का प्रसार दो चरणों में कहा जा सकता है। प्रथम चरण 1959 – 1993 तक तथा द्वितीय चरण 19993 के पश्चात्। यदि महिलाओं की पंचायत में भागीदारी को समझना है तो हमें इन दो चरणों के माध्यम से समझ सकते हैं। प्रथम चरण का जहां तक सवाल है इस चरण में महिलाओं की भागीदारी नगण्य थी। द्वितीय चरण में 73 वें एवं 74 वें संविधान के रूप में महिला आरक्षण मील का पत्थर साबित हुआ। इस संशोधन द्वारा पहली बार पंचायतों को इस बात के लिए अधिकृत किया गया कि वे स्वयं विकास कार्यों का सम्पादन करे।[6] इसका प्रारम्भ पी.वी. नरसिंहराव की सरकार ने 1991 में सर्वमान्य कानून बनाने के रूप में किया। सभी राजनैतिक दलों से विचार–विमर्श के पश्चात् 16 सितम्बर, 1991 में लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। तदोपरांत 30 संयुक्त सदस्यीय समिति को सौपा, जिसमें 20 सदस्य लोकसभा व 10 सदस्य राज्यसभा के सदस्य थे। संसद के दोनों सदनों व विभिन्न दलों के प्रतिनिधि द्वारा विचार–विमर्श उपरांत सुझाव के साथ 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा तथा 23 सितम्बर को राज्यसभा द्वारा स्वीकृती प्रदान की गयी।

तत्पश्चात् आधे से अधिक राज्यों के विधानमण्डलों ने इस विधेयक को अपनी स्वीकृती प्रदान की जिसमें 73 वें संविधान संशोधन को वैधानिक स्वरूप प्राप्त हुआ तथा शीघ्र ही इस विधेयक पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के पश्चात् 24 अप्रैल, 1993 को अधिसूचना जारी कर देश में संवैधानिक स्वरूप नई पंचायती राज व्यवस्था लागु हो गयी।[7] यह संवैधानिक संशोधन समाज व्यवस्था में अमूल–चूल परिवर्तन करने में सहायक बनी। ग्रामसभा की परिकल्पना **'ग्राम संसद'**

का स्वरूप धारण किया। नवीन संकल्पनाएं व क्रांतिकारी कदम के चलते 73 वें संविधान संशोधन महत्वपूर्ण रहा। 73 वॉ एवं 74 वॉ संशोधन करके स्थानीय प्रशासन में नारी प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की, जो कि संविधान के अनुच्छेद 40 का ही संशोधन है।[8]

73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम –

73 वें संविधान संस्थागत ढ़ाँचे में परिवर्तन का महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हुआ। जिसने ग्राम व्यवस्था में स्वशासन की नींव डाली, जो लोकतंत्रिक विकेन्द्रीकरण की सामाजिक न्याय तथा आर्थिक विकास स्थापित करना था। इसके अन्तर्गत योजनाएं बनाना, योजनाओं का लागू करना और क्रियान्वयन करना। इन सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हुये स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में ग्राम पंचायत को शक्ति प्रदान करना, उसे सृदृढ़ करना तथा सशक्त बनाना था। जो 73 वें संविधान संशोधन की देन है, इस व्यवस्था ने संवैधानिक स्वरूप प्रदान करके लोकतंत्र को मजबूत किया है। पहले ग्राम पंचायत राज्य सरकारों पर निर्भर थी वे आज कम होकर स्वतन्त्र रूप से बिना किसी हस्ताक्षेप के स्वयं को कार्य करने का अवसर मिला है।

ग्राम पंचायत को मजबूत देने के लिए इस संशोधन के माध्यम से नया अध्याय 9 जोड़ा गया तथा भारतीय संसद ने 24 अप्रैल, 1993 को यह आदेश भी दिया की एक वर्ष के अन्दर इस संशोधन के अन्तर्गत दिशा–निर्देशों जारी करे। अध्याय– 9 में ही 16 अनुच्छेद (243 से 243 ण तक) एक नवीन अनुसूची तैयार करने पर बल दिया गया। इसके अन्तर्गत ग्यारहवीं अनुसूची का प्रावधान संविधान में उल्लेखित है।

संविधान (अनुच्छेद 244) और 244 (क) की पांचवी और छठी अनुसूची में ऐसे प्रावधान है जिनमें राज्य को यह अधिकार दिया गया कि वह जनजातीय क्षेत्रों में विशेष प्रशासनिक व्यवस्था कर सकता है। संविधान में जनजातीय क्षेत्रों के निर्धारण का प्रावधान शामिल है ताकि सांसद व राज्य विधान मण्डलों में उन्हें प्रतिनिधित्व प्रदान किया जा सके।[9]

73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज प्रणाली 'त्रिस्तरीय व्यवस्था' मूल तत्वों पर आधारित थी। जिसमें ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, जिला स्तर पर जिला पंचायत तथा मध्यवर्ती स्तर पर क्षेत्र पंचायत प्रमुख थी। इसके अलावा अध्याय 9 के उक्त अध्याय में पंचायतों के अध्यक्षों का निर्वाचन, स्थानों का आरक्षण, पंचायतों का कार्यकाल अथवा अवधि, सदस्यता हेतु अर्हतायें, पंचायतों की शक्तियों, प्राधिकार एवं उत्तरदायित्व, पंचायतों द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्तियाँ, वित्तीय स्थिति के पुनर्विलोकन के लिए वित्त आयोग, लेखाओं की संपरीक्षा, राज्य निर्वाचन आयोग तथा निर्वाचन सम्बन्धी मामलों में न्यायालयों के हस्ताक्षेप के वर्जन आदि से सम्बन्धित व्यवस्था 73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से की गयी है।[10]

1993 में पंचायती राज से संबन्धित संशोधन से पूर्व भी दलित वर्ग के लिए पंचायतों में 1959 से 1993 के बीच आरक्षण हेतु प्रावधान उपलब्ध थे, परन्तु 34 वर्ष गुजरने के बावजूद उनकी क्षमता संवर्धन, भागीदारी निर्णय प्रक्रिया में प्रभावशीलता देखने में नहीं मिल पायी थी। कुछ अपवादों को छोड़कर कोई उभर नहीं पाये थे। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं और कमजोर वर्गों की भागीदारी से सम्बन्धित अध्ययन भी किये गये।[11]

73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से प्रभावी कदम उठाये गये हैं। जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवर्तित कामियाँ व न्यूनताओं जिसमें पंचायतों को संवैधानिक मान्यता का अभाव, इनके अनियमित चुनाव, दयनीय आर्थिक स्थिति, योजनाओं का लाभ न मिल पाना, वंचितों का (एस.सी., एस. टी. तथा महिलाओं) अपर्याप्त प्रतिनिधित्व सम्मिलित है। अब इन संस्थाओं को संवैधानिक अधिकार, प्रतिष्ठा और संरक्षण मिल जाने के पश्चात् 73 वें और 74 वें संविधान संशोधन में उपबंध के अनुसार राज्यों के विधानमण्डल पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए अपने–अपने कानून बनाने की बात कही है। प्रत्येक राज्य में गांव तथा जिला स्तर पर पंचायतें स्थापित होगी। इसमें जनसंख्या के आधार पर भी पंचायत गठित

करने का प्रावधान है। 20 लाख से अधिक जनसंख्या नहीं है, ऐसे राज्यों में बीच के स्तर की पंचायतों की आवश्यकता नहीं होगी।

पंचायतों को अधिक समय के लिए स्थगित व निरस्त नहीं रखा जा सकता। ऐसी स्थिति जिसमें पंचायत भंग हो गई है उसके 6 माह के भीतर चुनाव कराना अनिवार्य होगा। सभी पंचायतों में महिलाओं, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए आरक्षण व्यवस्था होगी। पंचायत का कार्यकाल 5 वर्ष तक होगा। पंचायतों को कुछ अधिकार मिले हैं, जिनमें कर वसूलना, अपना वित्तीय बजट तैयार करना तथा उनकी अपने विषय और अधिकार क्षेत्रों की सूची (11 वीं सूची) होगी। पंचायत का यह दायित्व होगा कि वे अपने आर्थिक विकास के लिए योजनाएं बना सकेंगी। साथ ही उन्हें कार्यान्वित कर सकेंगी। पंचायत चुनाव के लिए प्रत्येक राज्य में एक राज्य निर्वाचन आयुक्त होगा तथा हर पांच वर्षों में पंचायत की आर्थिक स्थिति को जानने के लिए वित्त आयोग रहेगा।

जम्मू और कश्मीर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, दिल्ली राजधानी संघ राज्य क्षेत्र, माणिपुर के पर्वतीय क्षेत्र तथा पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग पर 73 वां और 74 वां संशोधन लागु नहीं होता। अनुच्छेद 244 के अन्तर्गत आने वाले किसी राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन पर भी ये संशोधन लागु नहीं होंगे जब तक कि इन्हें स्पष्टतया लागु न किया जाए। 83 वें संविधान संशोधन ने सन् 2000 में अनुच्छेद 243ड़ में एक नया खण्ड जोड़कर कहा है कि अनुच्छेद 243घ के अन्तर्गत होने वाले स्थानों के आरक्षण अरूणाचल प्रदेश पर लागु नहीं होंगे।[12] इन स्थानीय संस्थाओं में अब लगभग 32 लाख चुने हुए प्रतिनिधि है। इनमें एक–तिहाई से अधिक महिलाएं है। कुछ राज्यों ने महिलाओं के लिए आरक्षण बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया है।[13]

73 वां संविधान संशोधन के अन्तर्गत महिला से सम्बन्धित प्रावधान–

भारत में पंचायती राज व्यवस्था प्राचीन एथेंस के प्रत्यक्ष लोकतन्त्र पर आधारित है। प्राचीन भारत में पंच परमेश्वर की जो संकल्पनाएं थी वह प्रत्यक्ष लोकतंत्र का प्रमाण है। इसका उद्देश्य नीचले स्तर पर अधिकतम सत्ता का हस्तांक्षरण एवं लोकप्रिय निर्वाचन से गठित स्थानीय संस्था के माध्यम से स्वशासन को स्थापित करना था। यह सिद्धांत चार बुनियादी धारणाओं पर आधारित है। राजनीति में प्रत्येक वर्ग के नागरिकों की भागीदारी, आर्थिक विकास के संसाधन जुटाना, बुनियादी संस्थाओं के समावेश से लोकतन्त्र मजबूत करना तथा राष्ट्रीय एकता व अखण्डता को बनाये रखना। जिसमें महिलाओं का खास महत्व देकर अवसर की समानता उपलब्ध कराना है। सामाजिक न्याय के माध्यम से न्यायपूर्ण एवं सम–समाज को स्थापित करना, जिसमें सभी नागरिक चाहे स्त्री हो या पुरूष सभी को समान समझा जाये, लिंगगत समानता को सुशासन की कहना गलत नहीं होगा।

73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से महिलाओं का प्रतिनिधित्व राजनीति तथा पंचायत में बढ़े इसलिए अनुच्छेद 243 घ(प्प्) में यह प्रावधान किया गया कि प्रत्येक पंचायत के प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के कम से कम एक तिहाई स्थान (जिनके अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिये आरक्षित स्थानों की संख्या भी है) स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और ऐसे स्थान किसी पंचायत में भिन्न–भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में चक्रानुक्रम से आवंटित किये जा सकेंगे।[14] इसके अलावा भी सरपंच या ग्राम प्रधान के रूप में एक तिहाई महिला पद होंगे। वर्तमान में पंचायती राज राज्य मंत्री पुरूषोंत्तम रूमाला ने लोकसभा में बताया की 1,06,250 महिला सरपंच है। जिसमें उत्तरप्रदेश 19,992, महाराष्ट्र 13,960, मध्यप्रदेश 11,864, आंध्रप्रदेश 6584, गुजरात 4676, राजस्थान 5121, बिहार 4289 और हरियाणा 2565 महिला सरपंच है। यह प्रतिनिधित्व राज्यों की आरक्षण नीति और महिलाओं के चुनाव जीतने पर निर्भर है। सबसे अधिक सरपंच उत्तरप्रदेश में हैं।

ग्राम पंचायत के स्तर पर लगभग 10 लाख सदस्यों एवं 80 हजार ग्राम प्रधान के पद महिलाओं ने संभाला, पंचायत स्तर पर 2 लाख सदस्य एवं 18 हजार अध्यक्ष पदों पर जिला पंचायत स्तर पर 15 सौ सदस्य और 160 अध्यक्षों

के पद पर महिला प्रतिनिधियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करायी।[15] 74 वें संविधान संशोधन के चलते महिलाओं में आत्मविश्वास जागृत हुआ है। नगरीय स्थानीय निकायों में महापौर, पार्षद, नगर अध्यक्षों एवं सदस्यों के पद भी निर्वाचित हुयी है। लम्बे समय में राजनीतिक भागीदारी को लेकर संघर्ष का परिणाम रहा है कि 73 वें संविधान संशोधन में आरक्षण के कारण महिलाएं जनप्रतिनिधि के रूप में सशक्त व निर्भिकता का परिचय दे रही है। वर्षों से उपेक्षित रही नारीयॉ आज अपने वजूद को जानकर आरक्षित पदों पर निर्वाचित होने पर गौरान्वित और सुखद अनुभव कर रही है।

महिलाओं के जागरूकता के प्रति चलाये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों से न केवल निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को स्वतन्त्र एवं असरदार भूमिका निभाने का अवसर मिला है अपितु साधारण ग्रामीण महिलाओं का भी पंचायत के प्रति जुड़ाव बढ़ा है।[16] संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को न सिर्फ संवैधानिक स्थिति प्रदान की गई बल्कि उसे विशेष अधिकारों से सम्पन्न भी किया गया। अर्थात् ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से साकार करने का कार्य शूरू हुआ।[17] पंचायतों में कृषि सुधार कार्य, सामाजिक वानिकी, ग्रामीण एवं कुटीर उघोग, आवास, गरीबी उन्मूलन, शौचालय निर्माण, मनरेगा से सम्बन्धित कार्य तथा स्वस्थ्य, हाठ बाजार, महिला एवं बाल विकास ऐसे कार्यों का सम्पादन करते हुये हितग्राही मूलक और सामुदायिक मूलक कार्यों को समाहित किया गया है।

पंचायती राज संस्थाएं सही अर्थ में समावेशी हो सकेगी। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुये केन्द्र सरकार ने 27 अगस्त 2009 को पंचायती राज संस्थाओं के तीन स्तरों में महिलाओं के एक–तिहाई आरक्षण को बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने हेतु एक संविधान संशोधन विधेयक संसद में पेश करने को मंजूरी दे दी। यह विधेयक 110 वें संविधान संशोधन विधेयक के रूप में 26 नवम्बर 2009 में पेश किया गया।[18] महिला आरक्षण का परिणाम है कि ग्रामीण स्तर पर महिलाओं का बड़ी संख्या में प्रतिनिधित्व हुआ है जो राजनीति विकास को दर्शाता है। लगभग 12 लाख महिलाएं निर्वाचित हुयी है। आश्चर्य की बात यह है कि दलित व आदिवासी महिलाएं भी इनमें सम्मिलित है।

पंचायती राज मंत्रालय द्वारा प्रायोजित पंचायतों की स्थिति रिपोर्ट वर्ष 2008–09 से ज्ञात होता है कि वर्ष 2010 में जिला पंचायतों में महिला सदस्य का प्रतिशत 35.80 प्रतिशत था। वर्ष 2007–08 में पंचायती राज मंत्रालय द्वारा निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों पर कराए गए राष्ट्रव्यापी अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला कि महिलाओं की अपने पुरूष संबंधियों की मात्र प्रॉक्सी होने की पहले की धारणा धीरे–धीरे समाप्त हो रही है, और यह माना जाने लगा है कि यदि महिलाओं को राजनीतिक प्रणाली में भागीदारी के अवसर प्राप्त हो तो वे भी अपने पुरूष साथी के समान समर्थ है।[19] किन्तु जनजातीय समाज की महिलाओं में राजनैतिक जागरूकता में कोई विचारणीय परिवर्तन नहीं आये।

निष्कर्ष –

उपरोक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीतिक सहभागिता सभी राजनीतिक गतिविधियाँ में सम्मिलित होना, स्वैच्छिक रूप से निर्णय लेना, यंत्र के रूप में, निर्णय, निरूपण तथा क्रियांवयन रूप एवं किसी कार्य की सहमति देना या सहमति न देना आदि गतिविधियाँ इसमें सम्मिलित है। समाज के सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक रूप से निर्णय प्रक्रिया तथा निर्धारण करने को प्रभावित करती है।

राजनीतिक सहभागिता को संकुचित तथा व्यापक अर्थों में देखा जा सकता है। व्यापक अर्थ में व्यक्ति के सार्वजानिक जीवन से सम्बन्धि समस्त गतिविधियाँ इसमें सम्मिलित की जाती है जैसे– मतदान, चुनाव में भाग लेना, उम्मीदवार के रूप में, निर्णय के प्रति विरोध, समर्थन, किसी समूह, संगठनों का सदस्य के साथ ही किसी मीटिंग में अपनी उपस्थिति देना। यह सहभागिता की परिधि में आते हैं इसके विपरित संकुचित अर्थ में वह सामूहिक न होकर वैयक्तिगत होता है। जिसका प्रभाव राजनीतिक व्यवस्था की निर्णयकारिता पर पड़ता है।

इसी तथ्य को 21वीं सदी की महिला सदी में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता द्वारा विश्लेषण करना जिसमें विशेषकर जनजाति महिलाओं के विषय में एक महत्वपूर्ण कदम होगा। बैतूल जिला भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अदम्य साहस तथा मूल्यों का परिचायक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची –

1. डॉ. ए.आर.एन. श्रीवास्तव – जनजातीय भारत, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2007, पृ.सं. 3–4।
2. सच्चिदानंद सिन्हा – नक्सली आन्दोलन का वैचारिक संकट, रोषनाई प्रकाषन, परिचय बंगाल, 2008, पृ.सं. 69।
3. ीजजचरूध्ध्ेंउंलंहलंदमकनण्पद
4. अमेरश्वर अवस्थी, आंनदप्रकाश – भारतीय प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, संस्करण, 1999–2000, पृ.सं. 496।
5. रजनी कोठारी – भारत में राजनीति, ऑरियन्ट लॉगमैन लि., नई दिल्ली, 1990, पृ.सं. 95–96।
6. ए. एस. नारंग – भारतीय शासन एवं राजनीति, गीतांजलि पब्लिकेशन हाऊस, नईदिल्ली, 2004, पृ.सं. 201।
7. पं. जवाहरलाल नेहरू – सामुदायिक विकास और पंचायती राज, सरिता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1965, पृ.सं. 104।
8. डॉ. शकुतला जैन – भारत में महिला अधिकार एवं कानून, हिन्दूस्तान समाचार, पब्लिकेशन, भोपाल, 2016, पृ.सं. 16–17।
9. डॉ. राशिदा अतहर – भारतीय सन्दर्भ में जनजातीय स्वास्थ्य का अध्ययनः दशा और दिशा, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत, पृ. सं. 191।
10. डॉ. राजेश कुमार – पंचायती राज एवं महिला नेतृत्व विकास–एक विमर्श, रिसर्च रिव्यू इंटरनेशनल जर्नल्स ऑफ मल्टीसीपलीनरी, वाल्यूम 3, इशु 10, अक्टूबर 2018, पृ.सं. 201।
11. के. जी. अग्रवाल – पंचायती राज में सामाजिक न्याय, हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, द्वितीय संस्करण, 2003, पृ.सं. 76–78।
12. सुभाष काश्यप – भारत का संविधान, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, नई दिल्ली, 2016, पृ.सं. 314।
13. वहीं पृ.सं. 314।
14. डॉ. राजेश कुमार – पंचायती राज एवं महिला नेतृत्व विकास –एक विमर्श, रिसर्च रिव्यू इंटरनेशनल जर्नल्स ऑफ माल्टी डिसिविलिनारी, वाल्यूम 3, इशू 10, अक्टूम्बर 2018, पृ.सं. 201।
15. वहीं पृ.सं. 201।
16. डॉ. दूर्गादास वसु – भारत का संविधान–एक परिचय, लेक्सिस नेक्सिस बटरवर्डस् बाधवा, नई दिल्ली, 2008, पृ.सं. 283–285।
17. कृष्णा बाबू प्रसाद रजक – लोकसभा एवं बिहार विधानसभा में महिला आरक्षण की स्थिति, इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल्स ऑफ कॉमर्स, आर्ट एण्ड साइन्स, टवस2, इशू 1, 2011, पृ.सं. 125।
18. शीलावंती मस्करे – अनुसूचित जनजाति महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक विकास पर पंचायत राज का प्रभाव, रिव्यू ऑफ रिसर्च जर्नल्स, वाल्यूम 4, इशू 10, जुलाई, 2015, पृ.सं. 1।
19. वहीं पृ.सं. 1।